पात्र-परिचय

पुरुष—

१—सूत्रधार — नाटकक निर्देशक।

२—श्रीकृष्ण — यदुवंशी राजकुमार, नायक।



स्त्री—

१—नटी — सूत्रधारक पत्नी।

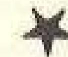
२—राधा — नायिका, राजकुमारी।

३—ललिता — राधाक सखी, झगड़ा लगओनिहारि।

४—विशाखा — राधाक सखी, कृष्णक दूती।

५—(चन्द्रावली) — कृष्णक गुप्त प्रेयसी।

६—ब्रजनारीगण — रासलीला मे भाग लेनिहारि ब्रजक स्त्रीगण।



म०म० हर्षनाथझा-विरचितम्

माधवानन्दनाटकम्

अथ प्रथमोऽङ्कः

[नान्दी गीति सं०—१]

जय जगजननी, जय-जगजननी, देहु सुमति मृगपतिगमनी ॥०॥
सरसिरुहासन विपदविनाशन, कारिणि मधुकैटभदमनी।
दितिसुतरञ्जन सुरगणगञ्जन महिषमहासुरबलदलनी ॥
त्रिभुवनतारिणि महिषविदारिणि, धूमरनयन-भसमकरनी।
चण्डमुण्डशिरखण्डनकारिणि, उनमत-रक्तबीज-शमनी ॥
अतिबलशुम्भनिशुम्भविनाशिनि, निजजनसकल-विपदहरनी।
तुअ गुण निगम अगम चतुरानन, कहि न सकत कत सहस्रफणी ॥
अमर-निशाचर दनुज मनुजशिर, चिकुरकलित जित रुचमनी।
तुअ-पदयुगलसरोरुह मधुकर, हर्षनाथ कवि सरस भनी ॥०॥

पहिल अङ्क

[गीत सं०—१]

जगजननी = संसारक माय। मृगपति-गमनी = सिंहवाहिनी। सरसिरुहासन = कमलक आसन वाली। मधु-कैटभ-दमनी = मधु ओ कैटभ नामक राक्षसक नियन्त्रण करयवाली। दितिसुत - रञ्जन = दैत्यकें प्रसन्न कएनिहार ओ देवताकें दुर्गति कयनिहार जे महिषासुर तकरा सैन्य-सहित मारनिहारि ॥ धूमर = धूआँ सनक आँखि सँ असुरकें भस्म कयनिहारि। उनमत = उन्मत्त। निगम आगम = वेद ओ तन्त्रशास्त्र। चतुरानन = ब्रह्मा। कत सहस्रफणी = कतेको शेषनाग। अमर-निशाचर = देवता, राक्षस, दैत्य ओ मनुष्यक माथक केश भिड़ला सँ शोभित तथा लाक्षमणिक शोभाकें जितयवला। अहाँक दुनू चरणकमलक भौंरा हर्षनाथकवि ॥

अपि च,

या देवी कुमुदेन्दुकान्तिरुचिरा शुभ्राम्बरा शोभना,
चन्द्रार्द्धाङ्कितमस्तकेन्दुवदना हंसाधिरूढा करैः ।
वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां दधानादराद्
भक्तानन्दकरी सदा वितरतु श्रेयांसि सा शारदा ॥१॥

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । एषा खलु खण्डवलाकुलकमलदिवाकरस्य महाराजछत्रसिंहात्मज-नेत्रेश्वरसिंहतनुजन्मनः श्री श्रीमदेकरुद्रेश्वरसिंहदेवस्य गुणिजनोपासिता परिषत् कस्याप्यभिनवरूपकस्य प्रयोगावलोकनाय समुत्कण्ठितेव लक्ष्यते । तत्कतमेन रूपकेणात्रोपस्थातव्यं, येनैतस्याः प्रसादपात्रतां गमि-

---

आओरी—

जे देवी कुमुदक फूल ओ चन्द्रमाक कान्तिक समान प्रकाशित छथि, उज्जर वस्त्र सँ सुन्दरि छथि, आधा चन्द्र लागल माँथवाली, चन्द्रमाक समान मुँहवाली हँस पर चढ़लि छथि हाथ सँ वीणा, रुद्राक्ष माला, अमृतपूर्ण घैल ओ विद्याकेँ आदर सँ रखने छथि ओ भक्तसभ केँ आनन्दित कयनिहारि छथि से सरस्वती भगवती सतत कल्याण करथु ।।१।।

[नान्दीक अन्त मे]

सूत्रधार – अधिक विस्तारक प्रयोजन नहि । ई खण्डवला-वंशरूपी कमलक सूर्यस्वरूप, महाराज छत्रसिंहक पुत्र-नेत्रेश्वर सिंहक बालक श्रीमान् एकरुद्रेश्वर सिंहक गुणवानलोकनि सँ सेवित सभा कोनो नवीन रूपकक (दृश्यकाव्यक) प्रयोग देखबाक हेतु उत्कण्ठित जकाँ देखि पड़ैछ । से कोन रूपक सँ एतय उपस्थित होइ, जाहि सँ एहि सभाक कृपापात्र होयब से नहि बुझैत छी । (फेर मोन पाड़बाक अभिनय कय)हमरालोकनिक लग 'सकराढ़ी' वंश मे उत्पन्न—कवि ओ पण्डितक मण्डली मे श्रेष्ठ श्रीहर्षनाथशर्माक द्वारा बनाओल समर्पित माधवानन्द नामक नवीन नाटक अछि, जाहि मे—रासलीला, प्रेम, गर्व, मान,

ष्यामीति नाध्यवस्यामि । (पुनः स्मृतिमभिनीय) अस्ति किलास्मासु सकराढीकुलनन्दनेन कविपण्डितकुलतिलकेन श्रीहर्षनाथशर्मणा विरचय्य समर्पितं माधवानन्दं नाम नवीनं नाटकम् । यत्र खलु—

रासक्रीडा-प्रेमगर्वमानानुशयविस्तरः ।
वर्णितोऽनुनयः पश्चात्काननक्रीडनं तथा ॥२॥

तदभिनयेनैषा रञ्जनीया । तत्साहाय्यनिमित्तं गृहिणीमाह्वयामि तावत् । (परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखम्) प्रिये ! इहागम्यताम् ।

नटी—(प्रविश्य) एसाम्हि, आणवेदु अज्जउत्तो । [एषाऽस्मि आज्ञापयतु आर्यपुत्रः ।]

सूत्र—प्रिये ! पश्य रमणीयतां शरत्समयस्य । इह हि,

निर्मेघमम्बरतलं विमलाः सरस्य
स्वच्छचन्द्रमृगाङ्ककरचुम्बितदिङ्मुखानि ।
सम्फुल्लकैरववनीषु मनोहरासु
गुञ्जन्ति मञ्जु मधुपानरता मिलिन्दाः ॥३॥

तदेतन्निशामधिकृत्य सङ्गीतकमनुष्ठीयताम् ।

पश्चात्ताप, प्रार्थना आदिक विस्तार वर्णित भय, बाद मे वनक्रीड़ा सेहो वर्णित अछि ।।२।।

तकरे अभिनय सँ एहि सभाकेँ प्रसन्न करी । ताहि मे सहायताक हेतु घरवाली केँ तावत् बजबैत छी ।(घूमि नेपथ्य दिस)प्रिये ! एम्हर आउ ।

नटी- (प्रवेश कय) इयेह छी, आज्ञा देथु आर्यपुत्र ।

सूत्र०—प्रिये ! देखू, शरद ऋतुक सुन्दरता । एतय तँ—

आकाश बिनु मेघक अछि, पोखरि स्वच्छ अछि लहराइत चन्द्रमाक किरण सँ व्याप्त सकल दिशा अछि ओ फुलायल कुमुदिनीक सुन्दर वन मे मधु पीबा मे संलग्न भौँरा मधुर गुञ्जन करैत अछि ।।३।।

तेँ एहि रातिक विषय लयकेँ संगीत प्रस्तुत करू ।

नटी—जहा आणवेदि अज्जउत्तो । [यथाऽऽज्ञापयति आर्यपुत्रः ।] (इति गायति ।)

[गीत सं०--२]

सुन्दर शरद समय सुखधामे ।
सजल जलद गेल, विमल गगन भेल, शशिमण्डल अभिरामे ॥
तेजि ककुभकामिनि निज दिनमणि अस्तशिखर चल गेला ।
निरखि सून घर, जनि रजनीकर, उपपति उपगत भेला ॥
सफल नयनरुचिचोर तिमिर जनि, हिमकर-दीप-तरासे ।
सघन-विटपिदल-विषम-महीतल, गिरिकन्दर कर वासे ॥
रविकर-कलित-वञ्चित-कमलिनि तँह, कुमुद-पराजित भेला ।
दिनकर-विरह निरखि निशि कुमुदिनि, तसु सम्पति हरि लेला ॥
रजनि मलिन नलिनी तेजि मधुकर, कुमुदिनि अनुगत होई ।
सम्पद सकल चराचर अनुचर, आपद बन्धु न कोई ॥
निर्मल सरित शरदसमयोचित, क्रमिक पुलिन दरशावे ।
लाज अधीन नवीन युवति जनि, लघु लघु जघन देखावे ॥

नटी—जेहन आज्ञा देथि आर्यपुत्र । (गबैत छथि) :—

[गीत सं०—२]

सजल जलद=पानिभरल मेघ । अभिरामे=सुन्दर । ककुभ-कामिनि=दिशारूपी नायिका । दिनमणि=सूर्य । रजनीकर=चन्द्रमा । उपपति=परपुरुष । उपगत=उपस्थित ॥ नयन रुचि-चोर तिमिर=आँखिक प्रकाशकेँ चोरओनिहार अन्धकार । हिमकर-दीप-तरासे=चन्द्रमारूपी दीपक प्रकाशक डरेँ । सघन विटपि दल=गहन वन सँ भयानक पृथ्वी पर ओ पर्वतक कन्दरा मे ॥ रविकर-कलित=सूर्यक किरण सँ शोभित एवं घेरल कमलिनी सँ कुमुदक फूल हारि गेल । तसु दिनकर-विरह=राति मे (कमलिनीकेँ) सूर्यक विरह मे देखि । तसु=ओकर (कमलिनीक) । रजनि मलिन=राति मे मौलायल । नलिनी

मलय पवन बह, चित नहि थिर रह, परिहर मानिनि माने ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥

सूत्र—प्रिये ! रमणीयं खलु गीतम् ।

(नेपथ्ये दोहा--१)

बन्धुजीव नवमल्लिका, केतकि कुमुदिनि कुन्द ।
चन्द्रकला मधुपान करि गुञ्जत मत्तमिलिन्द[1] ॥

सूत्र०—(आकर्ण्य) इयं खलु व्रजकामिनीभिस्सह रासक्रीडाप्रसक्तस्य मुरलीवादयतः श्रीकृष्णस्य प्रावेशिकी दोहा गीयते । तदेहि आवामप्यनन्तरकरणीयाय सज्जीभवावः । (इति निष्क्रान्तौ) ।

॥ इति प्रस्तावना ॥

=कमलिनीकेँ । मधुकर=भौँरा । कुमुदिनि अनुगत=कुमुदिनीक पाछू लागल । सम्पद=सम्पतिकाल मे । सकल चराचर अनुचर=सभ स्थावर ओ जङ्गम सेवक होइछ ॥ सरित=नदी । क्रमिक पुलिन=क्रमशः आन तट ॥

सूत्र०—प्रिये ! बड़ नीक गाओल ।

[नेपथ्य मे दोहा—] मधुरी, बेली, केओड़ा, कुमुदिनी, कुन्द ओ चन्द्रकला फूलक पराग पीबि मत्त भौँरा गुञ्जन करैछ ॥

सूत्र०—(अकानि) ई तँ व्रजक नायिका सभक संग रासलीला मे लागल मुरली बजबैत श्रीकृष्णक प्रवेश करबाक दोहा गाओल जाइछ । तेँ आउ हमरो दुहू गोटय अग्रिम कार्य हेतु तैयार होइ ।

[दुहू बहार भय गेलाह ।]

[इति प्रस्तावना]

१-वक्ष्यमाणचन्द्रावलीकृष्णसङ्गमसूचकत्वादेतत् पताकास्थानकम्, 'प्रस्तुतागन्तुभावस्य वस्तुनोऽन्योक्तिसूचनं पताकास्थानकम्' इति दशरूपोक्तलक्षणात् ।

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टः श्रीकृष्णो व्रजकामिन्यश्च)

गीत सं०--२

आनन्द नन्दकिशोर, आज ब्रज रास रचो ॥
केतकि कुन्द मुकुद परिमल लय, मलय-पवन बह धीर।
पूरन चन्द किरण चकमक कर, विकसित कुञ्ज कुटीर ॥
अलक विरचि सिर सिन्दुर, लोचन, कज्जल, उर बिच हार।
घरघर सञो निकसलि व्रजवनिता, नूपुर कर झनकार ॥
पिककूजित अलिगुञ्जित भूषण, शिञ्जित चौदिश पूर।
गावय गीत मधुर धुनि सखिगण, जनम ताप कर दूर ॥
बंशी अधर, मुकुट शिर, कछनी, कटि, तनु ललित त्रिभङ्ग।
नटवर भेष किये यदुनन्दन, विहरत राधा सङ्ग ॥
जप तप नियम करत कत मुनिजन, जेहि पद दरशन काज।
हर्षनाथ भन तसु गोपीजन, सहज परश कर आज ॥

राधा—(सर्वतो विलोक्य संस्कृतमाश्रित्य) कथम्, प्रभातप्राया रजनी। इह हि—

[तखन पूर्वक निर्देशानुरूप श्रीकृष्ण ओ व्रजक कामिनीसभ प्रवेश करैत छथि।]

[गीत सं०—२]

परिमल=सुगन्धि। कुञ्ज-कुटीर=लतागृह सँ बनल कुटी। अलक विरचि=केश सजाय। उर बिच=छातीक मध्य मे। व्रजवनिता=व्रजवासिनी नारी ॥ पिक-कूजित=कोइलीक कुहुकब। अलिगुञ्जित=भौंराक गुनगुनायब। भूषणशिञ्जित=गहनाक झनझनायब। पूर=भरैत अछि। जनम ताप=जन्मजन्मक दुःख ॥ अधर=ठोर पर। कछनी कटि=डाँर मे लघुवस्त्र। त्रिभङ्ग=त्रिवली (पेटक तीन श्रेणी) ॥

राधा—(सब दिस देखि संस्कृतक आश्रय लय) की भोरुकबा राति भय गेल। एहिठाम तँ—

दृष्ट्वा रासमहोत्सवं निशि शशी ताराभिरत्यादरा-
न्नूनं जागरणेन सम्प्रति दृढं खिन्नः परिम्लायति।
एषा कैरविणी शुभाऽनुहरते म्लानिं सुधांशोस्सती
दृष्ट्वा म्लानमरिव्रजं सरसिजव्रातस्समुज्जृम्भते ॥४॥

श्रीकृष्ण।—अहम् पुनरेवमुत्प्रेक्षे—

कान्ते ! त्वन्मुखमण्डलेन विजितः क्षीणाभिमानश्शशी
नूनम्मज्जति वारिधावनुगतिं कुर्वन्ति तस्य प्रियाः।
तारास्सर्व्वमिदं विलोक्य कुमुदैस्तद्बन्धुभिः खिद्यते
दृष्ट्वा वैरिविपत्तिमम्बुजकुलं हृष्टं समुज्जृम्भते ॥५॥

भवतु, सम्प्रति प्रातस्समयोचितकर्मानुष्ठानाय सर्वैरेवास्माभिर्गन्तव्यम्।

राति मे रासमहोत्सव कें अत्यन्त आदर सँ तारासभक संग देखिकें चन्द्रमा जगरना सँ एखन खिन्न भेल अत्यन्त मलिन भय रहल छथि। ई कुमुदिनी चन्द्रमाक सती नायिका शुद्ध सेहो मलिनता प्राप्त कय रहलि अछि। शत्रुदलकें मलिन देखि कमलक समूह विकसित भय रहल अछि ॥४॥

श्रीकृष्ण—आ हमतँ एहन सम्भावना करैत छी—

प्रिये ! अहाँक मुखमण्डल सँ जितल गेल क्षीण अभिमानवला चन्द्रमा निश्चित समुद्र मे डूबि रहल छथि ओ हुनक प्रियालोकनि (तारा) हुनक अनुसरण करैत छथि—एहिदृश्य कें देखि हुनक बन्धु कुमुदलोकनि खिन्न होइत छथि—शत्रुक विपत्तिकें देखि कमल सभ प्रसन्न भय विकसित होइत छथि ॥५॥

बेस, एखन प्रातःकालक उचित कार्य करबाक लेल हमरासबहिं चलैत चली।

व्रजकामिन्य:—तहा [तथा)]।

(इति निष्क्रान्तास्सर्वे)

॥ इति प्रथमोऽङ्कः ॥

अथ द्वितीयोऽङ्कः

[ततः प्रविशति श्रीकृष्णप्रेमगर्विता राधा, ललिता च]

राधा—

[गीत सं०--४]

कि कहब अपन सोहागे व्रजनन्दन वर पाओल भागे ॥
पुरुब पुजल हरबामा, से मोर पुरल सकल मनकामा ॥
सकल कला परबीना, रहथि सदा पहु मोर अधीना ॥
पलक न छाड़थि सङ्गे, कबहु करथि नहि मोर मनभङ्गे ॥
प्रेम विनति कत बेरी, करइत ठाढ़ रहथि मुख हेरी ॥
हर्षनाथ कवि भाने एकरदेश्वरसिंह रस जाने ॥

व्रजनारीगण—बेस ।

[सभ बहार भय गेल ।]

॥ पहिल अङ्क समाप्त ॥

दोसर अङ्क

[तखन श्रीकृष्णक प्रेमसँ गर्विता राधा ओ ललिता प्रवेश करैत छथि ।]

राधा— [गीत सं०—४]

व्रजनन्दन वर = श्रीकृष्णकेँ वरक रूप मे । हरबामा = महादेवक सुन्दरी (गौरी) । कला-परबीना = सभ कला मे प्रवीण (कुशल) ॥

(दोहा)-२

करथि यशोदानन्द मम, प्राण अधिक सम्मान ।
मम सहचरि गोपालि जन, दासीजन सम जान ॥

ललिता—

(दोहा)-३, ४

अचरज लागय मोहि सखि वृथा गरब तुअ देखि ।
वचनप्रीत हरि तोहि कर परजन प्रेम विशेखि ॥
रास-समय चन्द्रावली, लोचन भाव जनाय ।
तुअ छल करि सखि ! धाम तसु, गमन कयल यदुराय ॥

[गीत सं० - ५]

सखि हे ! अपरुब माधव-रीति ।
वचन अधिक तुअ प्रीति जनाबथि, अन्तर आनक प्रीति ॥
आज रभस रस, गेल्हुँ काजवश, तुअ प्रियसहचरि-गेह ।
देखल नयन भरि, सुनह यतन धरि हरि-चन्द्रावलि नेह ॥
तुअ छल करि हरि, गेलाह कोनहु परि, साँझ समय तसु धाम ।
चरण पखारि नारि अङ्कमभरि शयन बैसाओल स्याम ॥

ललिता— [दोहा]

वृथा गरब = व्यर्थक गर्व । वचनप्रीति = बाजे टा सँ प्रेम । परजन-प्रेम = आनक संग प्रेम कय । रास-समय = रासक्रीड़ाक काल मे । चन्द्रावली = कृष्णक एक प्रेयसी । लोचन = आँखि सँ । छल करि —लाथ कय । धाम तसु = ओकर घर । यदुराय = श्रीकृष्ण ॥

[गीत सं०—५]

अपरुब = अद्भुत । अन्तर = हृदय मे । रभस रस = उत्सुक भय । प्रियसहचरि-गेह = प्रियसखीक (चन्द्रावलीक) घर । अङ्कम भरि = भरि पाँज केँ । शयन = ओछान पर । स्याम = कृष्णकेँ । मुदित = आन-

दुअओ दुहुक पुन - गान करय पुन, मगन परस्पर प्रेम ।
कामुक कामिनि, परम मुदित जनि निर्धन पाओल हेम ॥
अबहु बुझिअ धनि, कपट प्रेम हुनि, करिअ हृदय अवधान ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भान ॥

अपि च, [गीत सं०-६]

सुन्दर शरद समय भल सजनी, चकमक चानन राति ।
रचल सुरत नव कामिनि सजनी, मदन मनोरथ माति ॥
अधर सुधारस पीउल सजनी, कपट सुतल पहु हेरि ।
विहसि उठल पहु से देखि सजनी, लाज वदन लेल फेरि ॥
निअ - कर वसन दूर करि सजनी अभरन सकल उतारि ।
कुचयुग परसि विहुसि पहु सजनी, पिउल अधर अवधारि ॥
निअ-कर गहि अङ्कमभरि सजनी, शयन सोआओल नाह ।
यामिनि-जलद नेहवश सजनी, करय देह एक चाह ॥
नखक्षत-भरल पयोधर सजनी, निरखि एहन होअ भान ।
कनकलता पर गिरियुग सजनी, ततय उगल दश चान ।
हर्षनाथ कविशेखर सजनी, रसमय मन दय भान ।
एकरदेश्वरसिंह रस सजनी, भावक सरस सुजान ॥

न्दित। निर्धन=गरीब आदमी जेना सोन पओने हो । अवधान=विचार, ज्ञान ॥

आओरो, [गीत सं०—६]

मदन-मनोरथ माति=कामवासनाक अभिलाषा मे मत्त भय । अधर सुधारस=ठोर रूपी अमृतक रस । निअ-कर वसन=अपना हाथें वस्त्र कें । अभरन=गहना । नाह=नाथ (प्रियतम) । यामिनि-जलद=बरसातक राति मे । नखक्षत-भरल पयोधर=नहक चिह्न सौं युक्त स्तन । कनकलता=सोनाक लत्ती(नायिकामे) । गिरियुग=दू टा पर्वत (स्तन) । दश चान=दस टा चन्द्रमा, दसो टा नहक दस चिह्न ॥

अपि च, [गीत सं०-७]

तरुण वयस मदमातलि सजनी, सरस मदन-वश नारि ।
रचल रसिक-सङ्ग मन दय सजनी रति विपरीत विचारि ॥
ललित युगल कुच ऊपर सजनी, तनु-लतिका सञ्चार ।
मेरु युगल लय थिर भय सजनी, दामिनि रचल विहार ॥
नाह वदन चञ्चल चूमि सजनी, पिउल अधर अतिमन्द ।
जनि पङ्कज बञ्चन नरि सजनी, बन्धुजीव पिब चन्द ॥
फूजल-चिकुर कलित मुख सजनी, स्वेदबिन्दु लस ताहि ।
पुजल मोतिनिकर जनि सजनी जलधर शशि अवगाहि ॥
सुरत समापि लाजवश सजनी हसलि नाहमुख हेरि ।
जनि कुचभर खेदित पहु सजनी, सिचति सुधारस ढेरि ॥
हर्षनाथ कविशेखर सजनी, रसमय मन दय भान ।
एकरदेश्वरसिंह रस सजनी, भावक सरस सुजान ॥

राधा—(सखेदम्) सहि सच्चं एद । मएवि रासोसरे तस्स तारिसो लोअणव्वावारो दिट्ठो । ता सव्व सम्भावीअइ । अदो वरं

आओरो, [गीत सं०—७]

मदन-वश=कामक अधीन । तनु-लतिका=देहलता । मेरु युगल=दुइ सुमेरु पर्वत । दामिनि=बिजलोका । विहार=क्रीड़ा । नाह=नाथ (प्रेमी) । वदन=नायिकाक मुँहकें । अधर=ठोर । पङ्कज बञ्चन=कमलकें ठकि कें । नरि=नदी मे । बन्धुजीव=मधुरीक फूल । चिकुर=केश सौं । कलित=शोभित । स्वेदबिन्दु=घामक बिन्दु । लस=शोभित । मोति-निकर=मोतीक समूह सौं । जलधर=मेघ सौं । शशि=चन्द्रमाकें । अवगाहि=नहाय ॥ समापि=समाप्त कय । कुचभर-खेदित=स्तनक भार सौं थाकल । पहु=पतिकें । सिचति=नायिका छिटैत अछि । सुधारस=अमृतक रस॥

राधा—(दुखी होइत) सखि ! ई सत्ये थिक । हमहुँ रासक अवसर पर हुनक

मालदीवाडिअं गदुअ जहा तहा अप्पाणं विल्लोभ्णेमि ।
[सखि सत्यम् इदम् । मयाऽपि रासावसरे तस्य तादृशो लोचनव्यापारो दृष्टः । तत् सर्वं सम्भाव्यते । अतः परं मालतीवाटिकां गत्वा आत्मानं विनोदयामि ।]

(इति निष्क्रान्ते ।)

इति द्वितीयोऽङ्कः

अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—अद्य श्रुतम्मया यत्किल ललितामुखाच्चन्द्रावलीभवनगमनवृत्तान्तं श्रुत्वा प्रकुपिता मत्प्राणाधिका राधिका परित्यक्तसकलालङ्कारा मालतीवाटिकायां तिष्ठति । तदचिरमेवैनामुपसृत्य प्रसादयिष्यामि । (सर्वतः परिक्रम्य) इयम् मालतीवाटिका । तदत्र प्रविश्य

ओहने आँखिक चेष्टा देखलहुँ । तेँ सबकिछु सम्भव अछि । !
एकर बाद मालती-वाटिका जाय जेना तेना मनकेँ बहलाबी ।
[दुहू बाहर भेलीहि ।]

॥ द्वितीय अङ्क समाप्त ॥

तेसर अङ्क
[श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण—आइ हम सुनल अछि जे ललिताक मुँह सँ चन्द्रावली-भवन जयबाक घटना सुनि अत्यन्त तमसायल हमर प्राणहुँ सँ अधिक प्रिया राधिका गहना-गुरिया त्यागि मालती-वाटिका मे छथि । त जल्दीये हुनक लग जाय प्रसन्न करब । (सब दिस टहलि) ई मालती-वाटिका थिक, त

लतान्तरितो भूत्वा तस्या रहस्यसम्भाषणं शृणोमि (इति तथा करोति) ।

(ततः प्रविशति सख्या ललितया सह यथानिर्दिष्टा राधा)

राधा—

[गीत सं--८]

सखि हे बुझल हरिक अनुरागे ।
मधुमय वचन भरम हम पड़लहुँ कि कहब अपन अभागे ॥
सुरतरुबीज उसर हम फेकल, रोदन निर्जन-गेहा ।
बधिर कान मृदुगान कयल जनि, कयल गोपशिशु नेहा ॥
सज्जन दाप, ताप रजनीकर, वायस शुचिता रीति ।
फणिकुल सहन, तपन कर शीतल, दुर्ज्जन होअ न प्रीति ॥
दुर्ज्जन-नेह, रेह सौदामिनि, सैकत-सेतु समाने ।
कोटि जतन कर तइअओ न थिर रहु, ई जग के नहि जाने ॥

एतय प्रवेश कय लताक आड़ भय हुनक एकान्त भाषण सुनैत छी ।
(तहिना करैत छथि ।)
[तखन सखी ललिताक संग पूर्ववर्णिता राधा प्रवेश करैत छथि ।]

राधा— [गीत सं०—८]

मधुमय वचन-भरम = मधु सँ भरल वचनक भ्रम मे । सुरतरु-बीज = कल्पवृक्षक बीया केँ । उसर = (ऊपर) उसर भूमि मे । रोदन = कानल । निर्जन गेहा = बिनु लोकक घर मे । बधिरकान = बहीरक कान मे कोमल गीत गाओल । गोप-शिशु नेहा = गोआरक बच्चा सँ (कृष्णसँ) स्नेह कयल ॥ सज्जन दाप = सज्जन केँ अहङ्कार । ताप रजनीकर = चन्द्रमाकेँ गर्मी । वायस-शुचिता रीति = कौआकेँ पवित्रताक ढंग । फणिकुल सहन = साँप केँ सहनशीलता । तपन-कर शीतल = सूर्यक किरण ठंढा । दुर्जन = दुष्ट व्यक्ति केँ स्नेह नहि होइछ ॥ दुर्जन नेह

सपनहु कबहु पल्हु नहि मानब, दुतक वचन परमाने ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥

ललिता—सहि ! जुत्तं खु इदं । [सखि ! युक्तं खल्विदम् ।]

श्रीकृष्णः—(श्रुत्वा स्वगतम्) सत्यमियं क्रोधवशंगता प्रेयसी । तदेनां यथा-तथा प्रसादयामि । (इत्युपसृत्य) कुशलम्भवत्याः ?

राधा—(मौनमवलम्ब्याधोमुखी तिष्ठति ।)

श्रीकृष्णः—केयमपूर्वा रीतिः । (इत्युक्त्वा राधाञ्चले गृह्णाति) ।

राधा—(करमाच्छिद्य, परावर्त्य मुखं, तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

(गीत सं—९)

पिशुन-वचन सुनि, रोष करह धनि, की मोर भेल अपराधे ।
तुअ विपरीत मनहुँ नहि चिन्तल, प्रेम करह किए बाधे ॥
मानिनि !

=दुर्जनक स्नेह । रेह सौदामिनि = बिजलीका रेखा । सैकत-सेतु = बालुक बान्ध । समाने = ई सभ तुल्ये होइछ । कोटि जतन = करोड़ो प्रयास ॥

ललिता—सखी ! से ठीके ।

श्रीकृष्ण—(सुनि स्वगत) सत्ये ई क्रोधक अधीन छथि प्रिया । तँ हिनका जेना तेना प्रसन्न करी । (लग जाय) अहाँ निकेँ छी ?

राधा—(चुप्पी लाधि नीचाँ मुहेँ रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—ई कोन अद्भुत ढंग कयल अछि ? (ई कहि राधाक हाथ धरैत छथि ।)

राधा—(हाथ छोड़ाय, मुँह फेरि ठाढ़ि रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण— [गीत सं० —९]

पिशुन-वचन = चुगिलाक बात । रोष = तामस । विपरीत = विरुद्ध ।

मलय-समीर बहय पिक कुहकय, पसरय कुसुम सुवासे ।
चमकल चानिनि रसमय यामिनि, ततय मान उपहासे ॥
जत अछि जगत विदित वनितागुण, तुअ तनु सकल निवासे ।
समुचित सदय हृदय करि सुन्दरि, पूरिअ याचक आसे ॥
सुन्दरि ! नयन निहारि दूर कर, लोचन - नयन - निखाते ।
जओँ पुन कण्टक लागु चरणमह, कण्टक तह होअ काते ॥
करिअ बिनति कलजोड़ि मानवति ! परिहरु असमय - माने ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥९॥

अपि च, [गीत सं०—१०]

सुन्दरि ! अयलहुँ तुअ गुण जानि ।
न करिअ गुनमति ! प्रेमक हानि ॥
सकलशरीर कुसुमसम तोर ।
ताहि उचित नहि हृदय कठोर ॥
विन कारण तुअ उपजय रोष ।
हम कि कहब मोर करमक दोष ॥
न करिअ सुन्दरि ! वदन मलान ।
हेरइत होअ मोर विकल परान ॥

मलय-समीर = मलयाचलक बसात । पिक = कोइली । कुसुम सुवासे = फूलक सुगन्धि । चानिनि = चाँदनी । यामिनि = राति । जत = जतेका । जगत विदित = संसार मे ख्यात । वनितागुण = नारीक गुण । याचक आसे = मङनिहारक आशा केँ । लोचन = आँखि सँ । नयन-निखाते = आँखिक खुट्टी (आँखि मे गड़ल सूक्ष्म कण) केँ । कण्टक = काँट । चरणमह = पायर मे । तह = सँ । परिहरु = छोड़ू ॥

आओरो [गीत सं०—१०]

कुसुम-सम = फूलक समान । करमक = पूर्वकृत कर्मक (भाग्यक) । वदन मलान = मुँह मलिन । हेरइत = अहाँ दिस तकैत । आपि =

भाषिय सरस वचन करि हास ।
अनुगत जन धनि न कर निरास ॥
रसमय हर्षनाथ कवि भान ।
एकरदेश्वरसिंह रस जान ॥

राधा—(तथैव विमुखी तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

दृष्टा यद्यसि मात्यति प्रियतमे विङ्कङ्कणाभ्यां करौ
ताम्बूलेन रदच्छदावथ कुचौ हारेण हीनौ पुनः ।
पादौ नूपुरवर्जनेन कुरुषे चित्रं नु ते चेष्टितं
कः कुर्यात्परसम्पदोऽपहरणं मुग्धे ! परस्मिन् क्षमा ॥६॥

अपि च, [गीत सं०—११]

रमनि हे ! सुनिअ वचन दय कान ।
जँओ मोर मानिअ दोग रोप करि कर धनि ! दण्डविधान ॥
कुलिश समान बान करि लोचन, दिढ़ करि भौँह कमान ।
करि समधान अचानक वेँधिअ न करिअ वदन मलान ॥

बाजू । अनुगत जन = शरणागत व्यक्तिकेँ ॥

राधा—(ओहिना मुँह फेरने रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—हे प्रियतमे ! जँ तमसायलि हमरा पर छी तँ दुनू हाथ केँ कगना सँ, दुनू ठोर केँ पान सँ, दुनू स्तन केँ हार सँ ओ दुनू पायर केँ नूपुर सँ हीन कियैक करैत छी ? ई अहाँक चेष्टा तँ आश्चर्यक अछि । हे मुग्धे ! अनका पर तमसायकेँ के आनक सम्पत्तिक हरण कय सकैछ ? ॥६॥

आओर, [गीत सं०—११]

कुलिश-समान-बान = वज्रक समान बाण बनाय आँखिकेँ । दिढ़ = स्थिर । भौँह-कमान = भौँहरूपी धनुष पर । समधान = निशाना दिढ़तर = विशेष सवकत । पीन पयोधर गिरिवर = पुष्ट स्तन रूपी दृढ़

दिढ़तर पीन पयोधर गिरिवर युगल साधि रतिरङ्ग ।
बाहुपाश लय दिढ़ कय बान्हिअ, न करु वृथा मनभङ्ग ॥
तुअ यदि रुचित विरोध कमलमुखि, होअओ, करिअ जनु देरि ।
चुम्बन सरस बिलोकन भाषण, देहु पुरुवकृत फेरि ॥
रसमय शरद समय सुखयामिनि, ततय उचित नहि मान ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भान ॥

अपि च, गीत सं०—१२

रमनि हे ! परल कओन मोर दोष ।
किए नहि नयन हेरिअ, नहि भाषिअ, किए मन उपजल रोष ॥
तुअ रुचि-विजित निरखि निजकामिनि, तुअ अनुचर मोहि जानि ।
कुपित मदन शर, हनय सुदिढ़ कर श्रवण अवधि धनु तानि ॥
रसमय शयन सरस नव कानन, सरस शरद निशि मोहि ।
लगइछ सकल बिरस अति हेरइत, अधर सुखायल तोहि ॥
मोर अपराध, अधर निज सुन्दरि ! कोप उष्णतम श्वास ।
परसि तपाविअ, समुचित मानिअ अपरब कोप प्रकाश ॥

टा पहाड़ मे । साधि = लगाय, कसि । बाहुपाश = बाँहिक फानी । वृथा = व्यर्थ ॥ रुचित विरोध = विरोध पसन्द अछि । पुरुवकृत = पूर्व मे कयल चुम्बनादि हमर घुराय दिअ । सुख-यामिनि = सुखदायी राति ॥

आओर, [गीत सं०—१२]

रमनि = सुन्दरी । तुअ रुचि = अहाँक सुन्दरता सँ जीतलि अपन कामिनी (पत्नी) केँ देखि ओ हमरा अहाँक सेवक जानि कामदेव कुपित भय कान तक धनुष तानि केँ मजबूत हाथेँ बाण मारैत छथि । शयन = सुतब । कानन = वन । शरद-निशि = शरद ऋतुक राति । बिरस = रसहीन । अधर = ठोर । अधर = ठोर केँ । कोप उष्णतम श्वास = तामसेँ अत्यन्त गर्म श्वास क स्पर्श सँ । तपाविअ = तप्त

नयन निहारि वचन एक भाषिअ, करिअ अधर रस दान।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भान॥

अपि च, गीत सं०—१३

कुमुदिनि! करु निज वदन विकास।
तुअ गुणनिकरनियन्त्रित मधुकर, अनुसर न करु निरास।
दिवस विगत भेल, रजनि उदय देल, गगन निशाकर राज।
उगि गेल उडुगन, तइअओ न परसन, तुअ मुख मुनल आज॥
परिहरि बेलि चमेलि विषमदल, केतकि कुन्द मरन्द।
तुअ गुण गाबय, चौदिस धाबय, कतहु न रमय मिलिन्द॥
सुन्दर रूप मरन्द मनोहर, जगभरि विदित सुवास।
करिअ सफल धनि, बुझिअ हृदय गुनि, पूरिअ मधुकर आस॥
परसनि भय मुख मौन तेआगिअ, करु गुनमति! रस दान।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि भान॥

राधा—जुत्तं तुज्झ महुअरत्तणं, जदो महुलोहेण जत्थ तत्थ भमसि। ण पुणो मे कुमुदणित्तणं, जदो ण मं महुअरो अणुसरइ। [युक्तं तव मधुकरत्वम्, यतो मधुलोभेन यत्र तत्र भ्रमसि। न पुनर्मे कुमुदिनीत्वम्, यतो न मां मधुकरोऽनुसरति।] (पुनस्सकोपं नेत्रे उन्मील्य,—

[गीत सं०—१४]

माधव! बूझल तोहर सिनेहे।
जाहि रमनि सङ्ग रइनि गमाओल, जाहु अचिर तसु गेहे॥
मधुमय बचन सुनत के माधव, छाडि देहु गुणगाने।
सनिधुनि कपट चरित तु सुविदित, भरल दुअओ मोर काने॥
श्रमजल भरल सकल तन, लोचन जागर-रञ्जित शोभे।
सुखमय शयन सदन तसु चाहय, जे तुअ मानस लोभे॥
प्रेमरङ्ग तुअ अङ्ग लपटि निज, भूषण छापल रामा।
तुअ तनु आज निरखि अवधारल, तसु भूषण अभिरामा॥
करिअ कृपा निज भवन गमन करु, तुअ दरशन नहि भावे।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस, हर्षनाथ कवि गावे॥

(इत्युत्थाय सख्या सह निष्क्रान्ता।)

करैत छी। समुचित=ताहि सँ ठीके बुझाइछ॥

आओरो, [गीत सं०—१३]

तुअ गुण-निकर-नियन्त्रित=अहाँक गुण-समूह सँ वश मे आयल। मधुकर=भौंरा। अनुसर=अनुगामी अछि॥ विगत=वितल। रजनि=राति मे। निशाकर=चन्द्रमा। उडुगन=तरेगन। परसन=प्रसन्न। परिहरि=छोड़ि। विषमदल-केतकि=असमान (काँटयुक्त) केओलाक फूल। मरन्द=पराग। धावय=दौड़ैत। मिलिन्द=भौंरा। परसनि=प्रसन्न। मौन=चुप्पी। तेआगिअ=छोड़॥

राधा—अहाँकेँ भौंराक स्वभाव ठीक अछि, जे मधुक लोभ सँ जतय ततय घुमैत छी। आ हमरा कुमुदिनीक स्वभाव नहि अछि कियेक तँ भौंरा हमरा दिस नहि अबैछ। (फेर कोप सहित आँखि खोलि)—

[गीत सं०—१४]

रमनि सङ्ग=रमणीक सङ्ग। रइनि=राति। अचिर=शीघ्र। तसु गेहे=तकर घर। कपट-चरित=छल-युक्त अहाँक स्वभाव। सुविदित=हमरा नीक जकाँ बुझल अछि॥ श्रमजल-भरल=श्रम कयला पर पसेना सँ भरल। सदन तसु=ओहि नायिकाक घर मे। तुअ मानस लोभे=अहाँक मन मे लोभ अछि॥ भूषण छापल रामा=ओ सुन्दरी अहाँक देह मे अपन गहनाक छाप दय देलक। निरखि अवधारल=देखिकेँ बुझलहुँ। तसु भूषण=ओकर गहना केहन सुन्दर छैक से॥

(उठि सखीक संग बहार भय गेलि।)

श्रीकृष्णः—(सवैक्लव्यम्) कथन्नु तैव प्रकुपिता प्रियतमा । तत्किमथानुष्ठेयम् ? कथं वा धृतिं धारयामि ? को वा लोकोत्तररमणीयां तां विस्मर्तुं पारयति ? अहो शरीरसौन्दर्य्यं ! तथाहि—

[गीत सं०--१५]

कि कहब अपरुब नागरि रूपे ।
नीलवसनि धनि, जलदवलित जनि, थिर-रहु तड़ित-सरूपे ॥
राजित वदन मनोहर तापर, कुन्तल कुटिल विराजे ।
राहुदशन डर तिमिर नुकाएल, जनि रजनीकर राजे ॥
चललि रोमावलि भुजगि नाभिबिल, लोचन खञ्जन आसे ।
कुचकञ्चनगिरि-निकट नुकाइलि, नासा-गरुड तरासे ॥
नूपुर पद्मराग-पदशिञ्जित ललित-नटन-श्रुतिकञ्जे ।

नयनभेद कहु, पुलक अङ्गमहु कनक विशेषक पुञ्जे ॥
तसु तनु रचल मदन जनि रसमय, की रसलम्पट चाने ।
जप-तप-निरत सतत रसवञ्चित, की बिह रचत अजाने ॥
सुन्दर अधर मधुरिमद गञ्जय, कटि केहरि अभिमाने ।
एकश्देश्वरसिंह नृपति रस, हर्षनाथ कवि भाने ॥

भवतु, कर्त्तव्योऽत्रानुनयप्रयत्नविशेषः (इति निष्क्रान्तः) ।

॥ इति तृतीयोऽङ्कः ॥

अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति ससम्भ्रमा विशाखा)

विशाखा—अज्ज क्खु सिरीकह्नेण कलम्बतलम्मि आहूदाम्हि । एसो कलम्बरुक्खो ता एत्थ पविसामि [अथ खलु श्रीकृष्णेन कदम्बतलमाहू-

---

श्रीकृष्ण—(विकलतापूर्वक) की चलि गेलीह तमसायलि प्रियतमा ? त एतय की करी ? कोना कय धैर्य धरू ? अथवा के ओहि अलौकिक सुन्दरी कें बिसरि सकैछ ? अहो शरीरक सुन्दरता ! जेना कि—

[गीत सं०—१५]

नागरि-रूपे = चतुरा नायिकाक स्वरूप । नील-वसनि = नील रङ्गक कपड़ा पहिरने । जलद-वलित = मेघ मे शोभित । तड़ित = बिजलोका ॥ राजित = शोभित । कुन्तल कुटिल = केश टेढ़ । राहुदशन = राहुग्रहक कटबाक (ग्रहण लगबाक) । तिमिर = अन्धकार मे । रजनीकर = चन्द्रमा । रोमावलि भुजगि = रोइयाँक पाँती रूपी साँपिन । नाभि-बिल = ढोँढ़ी रूपी बिल सँ । लोचन-खञ्जन-आसे = आँखि रूपी खञ्जन-पक्षीकेँ खयबाक आशा सँ । कुच-कञ्चन-गिरि = स्तनरूपी सोनाक पर्वतक समीप । नुकाइलि = विलीन भेल । नासा-गरुड-तरासे = नाक रूपी गरुडक लोलक डरेँ ॥ पद्मराग-पद-शिञ्जित = मणिक समान लाल पएर मे झुनझुनाइछ । ललित-नटन-श्रुतिकञ्जे = सुन्दर नचैत कर्णफूल । नयन-भेद = आँखिक भङ्गिमा । पुलक = आनन्द ।

अङ्गमहु = देह मे । कनक = सोना । पुञ्जे = ढेर ॥ मदन = कामदेव । की रसलम्पट = अथवा रस मे लिप्त । रसवञ्चित = रसरहित अजानी विधाता कोना रचितथि ॥ अधर मधुरिमद गञ्जय = ठोर मधुरी फूलक मद केँ गञ्जित करैछ । कटि केहरि अभिमाने = डाँर सिंहक अभिमान केँ गञ्जित करैछ ॥

बेस, एहिठाम प्रार्थना करबाक प्रयास सभ करक चाही ।

(बहार भेलाह ।)

॥ तेसर अङ्क समाप्त ॥

चारिम अङ्क

[हरबड़ाइलि विशाखा प्रवेश करैछ ।]

विशाखा—आइ त श्रीकृष्ण कदम्ब तर बजओने छथि । ई कदम्बक गाछ

ताऽस्मि । एष कदम्बवृक्षः । तदत्र श्रीकृष्णो भविष्यति । तस्मादत्र प्रविशामि ।] (इति प्रवेशमभिनयति) ।

(ततः प्रविशति चिन्तानिमग्नः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः – (दृष्ट्वा सहर्षमाशिषो दत्त्वा) प्रियसखि विशाखे ! अद्यातीव कोपकलुषितमानसा भवत्याः प्रियसखी मामनादृत्य कदलीवाटिकां प्रस्थिता । तदत्रावलोक्य विधेयम् ।

अपि च — [गीत सं० — १६]

कि करब आज यतन हम रे, तेजि गेलि व्रजरामा ।
सुखद-नेह भेल तनि बिनु रे, दुखमय परिनामा ॥
केतकि कुन्द कुमुदरस रे, परिमल लय धीरे ।
बहय मन्द मलयानिल रे, मोर दयह शरीरे ॥
अलिकुल गान कान दह रे, शशिकर तनुतापे ।
चन्दनपरस सुमरि पुन रे, मानस मोर कापे ।
जेहि विधि होअ समागम रे, तसु करिअ उपाई ।
करिअ यतन सखि मानिनि रे मोहि देहु मनाई ॥

थिक । त एतय श्रीकृष्ण होयबे करताह । तेँ एतय प्रवेश करैत छी। (प्रवेश करबाक अभिनय करैत छथि ।)

[तखन चिन्ता मे डूबल श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण – (देखि सहर्ष आशीर्वाद दय) प्रियसखी विशाखा ! आइ अत्यन्त तामस सँ मलिन मनवाली अहाँक प्रियसखी हमर अनादर कय करजान मे चल गेलीह । से एहिठाम की करी से विचारू ।

आओरो—

[गीत सं०—१६]

यतन = प्रयास । व्रजरामा = व्रजभूमिक सुन्दरी राधा । नेह = स्नेह । परिनामा = परिणाम फल । परिमल = सुगन्धि । दहय = जरबैछ । अलिकुल = भौँराक समूहक । कान दह = कानकेँ जरबैछ । शशिकर

हर्षनाथ कविशेखर रे, रसमय इहो भाने ।
एकरदेश्वरसिंह रस रे, बुझ गुणक निधाने ॥

विशाखा—जहामइ-वैहवं उवाअं करिस्सं । [यथामतिवैभवम् उपाय करिष्यामि ।]

श्रीकृष्णः—तावदहं भाण्डीरनिकटं गच्छामि (इति निष्क्रान्तः ।)

विशाखा – (परिक्रम्य) इअं कअलीवाडिया । एत्थ पिअसही हुविस्सदि । ता एत्थ पविशामि इयं कदलीवाटिका । अत्र प्रियसखी भविष्यति । तदत्र प्रविशामि । (इति प्रवेशमभिनयति ।)

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णावधीरणानुतप्ता सख्या ललितया सह राधा)

राधा—सहि कअबहुविणओ वि सिरीकण्हो मए ओहीरिदो त्ति अहो पमादो ! कि एत्थ करणिज्जं । कहं पुणो वि समागमो हुविस्सदि [सखि कृतबहुविनयोऽपि श्रीकृष्णो मयाऽवधीरित इत्यहो प्रमादः ! किमत्र करणीयम् ? कथं पुनरपि समागमो भविष्यति ?] (इत्यनुतापं करोति) ।

तनु तापे = चन्द्रमाक किरण देह मे ताप दैछ । चन्दन-परस = चाननक स्पर्शकेँ । सुमरि = स्मरण कय । मानस = मन । मनिनि = मानवतीकेँ ।

विशाखा—अपन बुद्धि-वैभवक अनुसार उपाय करब ।

श्रीकृष्ण—तावत् हम बड़क गाछक लग जाइत छी । (बहार भेलाह ।)

विशाखा—(टहलि) ई करजान थिक । एतय प्रियसखी होयतीह । त एतय प्रवेश करैत छी । (प्रवेशक अभिनय करैत छथि ।)

[तखन श्रीकृष्णक द्वारा अवहेलना सँ सन्तप्ता, सखी ललिताक संग राधा प्रवेश करैत छथि ।]

राधा—सखी ! बहुत विनय कयनहुँ श्रीकृष्णक हम अवहेलना कयल—ई त बड़ गलती भेल ! आब की करी ? कोना फेर मिलन होयत ? (पछताइत छथि ।)

विशाखा—इयं पिअसही किम्पि मन्तेदि, ता लदान्तरिआ भविअ इमाए रहस्समन्तणं सुणामि। [इयं प्रियसखी किमपि मन्त्रयति। तत् लतान्तरिता भूत्वाऽस्या रहस्यमन्त्रणं शृणोमि।] (इति तथा करोति।)

[गीत सं०--१७]

राधा—सखि हे! यतन दय कर मोर काजे।
कोनपरि आज देखब व्रजराजे॥
पीत—वसन तनु घन—अभिरामे।
लसय कनक जनि शालगरामे॥
सुन्दर वदन नयन अभिरामे।
खेलय खञ्जन पङ्कजधामे॥
कनक मुकुट शिखिपुच्छ विराजे।
जनि कञ्चनगिरि सुरधनु राजे॥
राजित कर बिच मुरलि विशाला।
लसय कमल जनि पंकजनाला॥

विशाखा—ई प्रियसखी किछु विचारैत छथि। त लत्तीक अड़ भय हिनक गुप्त परामर्श सुनैत छी। (तहिना करैत छथि।)

राधा— [गीत सं०-१७]

यतन = प्रयास कय। व्रजराजे = श्रीकृष्णके। पीत-वसन = पीयर वस्त्र। तनु घन-अभिरामे = मेघ सन सुन्दर देह पर। लसय = शोभैछ कनक = सोन। शालगरामे = शालग्राम पाथर पर। सुन्दर वदन = सुन्दर मुँह पर। नयन अभिरामे = सुन्दर आँखि। पङ्कज धामे = कमलरूपी घर मे॥ शिखिपुच्छ = मयूरक पाँखि। कञ्चनगिरि = सोनाक पर्वत पर। सुरधनु = इन्द्रधनुष, पनिसोखा। राजे = शोभित॥ राजित = शोभित। कर बिच = हाथक बीच मे। लसय

रसमय हर्षनाथ कवि गावे।
एकरदेश्वरसिंह बुझ भावे॥

अपि च--

[गीत सं०--१८]

सुनु सखि ओरे कओन दुरितफल दुरमति, यदुपति,
कयल अनादर निजमति॥
तनि मोहि ओरे, एक प्राण छल दुइ तन, सब खन,
कयल भेद हम निज मन॥
विधिवश ओरे, यदि न मिलत मुरलीधर, यदुवर,
हतब जीव कहि गिरिधर॥
उपचरु ओरे, मोर अवगुन पहु बिसरथि, आबथि,
दिन दिन नेहु बढ़ाबथि।
रस बुझु ओरे, रसभावक जन मन दय, गुणमय,
हर्षनाथ भन रसमय॥

(इति शिरसि हस्तं निधाय विरहवेदनामभिनयति)।

ललिता—सहि! समस्ससिहि। [सखि! समाश्वसिहि।]

राधा—(सखेदम्)—

कमल = कमलक फूलक संग शोभित होइछ। पङ्कज-नाला = कमलक नाल॥

आओरो,

[गीत सं०—१८]

दुरितफल-दुरमति = पापक फल थिक ई दुर्बुद्धि। यदुपति = कृष्णकें। निजमति = अपन बुद्धि सँ॥ तन = देह॥ विधिवश = संयोग सँ। हतब जीव = प्राण त्यागब॥ उपचरु = उपाय करू॥

ललिता—सखी! धैर्य धरु।

राधा—(खेद सहित)—

[गीत सं०--१९]

एकसरि कोन परि खेपब, सरस शरदऋतु आज ।
मदन—दहन दह मोर तनु, कि करब पहु न समाज ॥
पीबि कुसुमरस हर्षित, गुञ्जत अलि दह कान ।
सजल नलिनिदल चानन मोर तनु अनल समान ॥
दहओ जानि मोहि एकसरि, सौति—सहोदर चान ।
जगतप्राण नहि समुचित, तोहि मोर हरह परान ॥
मनसिज मोर मन तापय, कि कहब परजन दोष ।
केओ न तनु हित जगभरि, जाहि करय बिह रोष ॥
बुझत पराभव के मोर, के मोहि होएत सहाए ।
सकल जगत मोहि विपरित, कतहु न जिबन—उपाए ॥
हर्षनाथ कविशेखर, रसमय मन दय गाब ।
गुणमय एकरदेश्वसिह बुझ अभिनव भाव ॥

विशाखा—एदेण इमाए वअणोवण्णासेण तक्कीअइ, उक्कण्ठिदा पिअसहीति । ता सुलहं चेअ कज्जत्ति उवसप्पामि इमं [एतेन अस्या

[गीत सं०—१९]

मदन-दहन=कामदेवरूपी आगि । दह मोर तनु=हमर देह कें जरबैत अछि । पहु न समाज=पति समीप नहि छथि ॥ कुसुमरस=फूलक रसकें । अलि=भौंरा । सजल नलिनि दल=पानि देल पुरइनिक पात वा फूलक पत्ती । अनल=आगि । दहओ=जराबओ । सौति-सहोदर=सौतिनिक (लक्ष्मीक) सोदर भाय । चान=चन्द्रमा । जगतप्राण=हे संसारक प्राणदाता कहाय हमर प्राण हरैत छह जे उचित नहि थिकह ॥ मनसिज=कामदेवक । परजन=आनक । बिह विधाता ॥ पराभव=दुःख ॥

विशाखा—हिनक एहि वचन-विन्यास सँ बुझि पड़ैछ जे प्रियसखी उत्कण्ठिता

वचनोपन्यासेन तर्क्यते उत्कण्ठिता प्रियसखीति । तत् सुलभं चैव कार्यम् इत्युपसर्पाम्येनाम् ।] (इत्युपसर्पति) ।

राधा—(दृष्ट्वा सोच्छ्वासम्) कहं पिअसही ? पिअसहि ! एत्थ उअविसदु भोदी [कथं प्रियसखी ? प्रियसखि ! अत्रोपविशतु भवती ।] (इत्युपवेशयति) ।

विशाखा—किणो उव्विग्गाव्व लक्खीअइ भोदी ? [किमुद्विग्नेव लक्ष्यते भवती ?]

राधा—(सोद्वेगं) अप्पणो सहीअणे कि अकहणिज्जं, ता सुणाहि । [आत्मनः सखीजने किमकथनीयम्, तच्छृणु ।]

[गीत सं० -- २०]

सुनिअ सुचेतनि सहचरि, कि कहब निज अविचार ।
कयल रोष-कलुषित मन, सुपहु अनादर भार ॥
बहुविधि बिनति कयल पहु, सगर रइनि बिति गेल ।
कुलिश-कठोर हृदय मोर, तइओ न परसन भेल ॥

छथि । तखन त काज सुलभे अछि । तें हिनक लग जाइत छी । (लग जाइत छथि ।)

राधा—(देखि पैघ साँस लैत) अएँ प्रियसखी ? प्रियसखी ! अहाँ एतय बैसू । (बैसबैत छथि ।)

विशाखा—विकल जकाँ किऐक लगैत छी अहाँ ?

राधा—(उद्वेग सहित) अपन सखीक लग कोन बात नहि कहबा योग्य अछि, तें सुनू—

[गीत सं०—२०]

सुचेतनि=बुधियारि । कलुषित मन=मलिन मन सँ ॥ बहुविधि=बहुत तरहें । सगर रइनि=सम्पूर्ण राति । कुलिश-कठोर=वज्रक समान कठोर हृदय । परसन=प्रसन्न ॥ नाह=प्रियतम । अन्तर दाह=हृदय मे ज्वाला अछि ॥ सरस नाह-विरहानल=रसिक पतिक

हम उठि गेलहु रोष करि, मलिन वदन भेल नाह ।
तइओ न घरि हम हेरल, से मोर अन्तर दाह ।।

कि कहब अपन मनोदुख, अपनहि बुझ अनुमानि ।
सरस-नाह-विरहानल, के सहि सकय सेआनि ।।

कि करत सज्जन-सङ्गति, सुमति नीति उपदेश ।
विहु विपरित मुनिजनहुक उपजय कुमति विशेष ।।

फेरि हम एहन करब नहि, करु सखि तेहन उपाए ।
एक बेरि विनति करथि पहु, मोर गौरव रहि जाए ।।

हर्षनाथ कविशेखर, रसमय मन दय गाव ।
एकरदेश्वरसिंह रस, भावक सरस सुभाव ।।

विशाखा—(आत्मगतम्) । सच्चं चेअं तक्किदं मए, सुलहं कज्जं त्ति । (प्रकाशम्) सहि ! राहिए, तुमं विणा सिरीकण्हो वि तुमं विरहवेअणां अणभविअ विक्खित्तचित्तव्व भमई। ता सुलहं तुज्झ कज्जत्ति मल्लिआवणं गदुअ चिट्ठदु भोदी । अहं वि सिरीकण्हं तस्थ आणइस्सं। [सत्यं चैतत् तर्कितं मया सुलभं कार्यमिति । सखि ! राधिके त्वां, विना श्रीकृष्णोऽपि त्वमिव विरहवेदनामनुभूय विक्षिप्तचित्त इव भ्रमति । तत् सुलभं तव कार्यम्, इति मल्लिकावनं गत्वा तिष्ठतु भवती । अहमपि श्रीकृष्णं तत्रानयिष्यामि ।।]

[इति निष्क्रान्ताः सर्वाः]

इति चतुर्थोऽङ्कः

वियोगक आगि के। सेआनि = चतुर नायिका ।। विहु-विपरित = जखन विधाता विपरीत होथि । कुमति = अधलाह विचार ।।

विशाखा—(मनहि मन) ई तँ सत्ते हम तर्क कयने छलहुँ जे काज सुलभ अछि। (प्रकाश) सखि राधिका ! अहाँक विना श्रीकृष्णो अहीँ जकाँ विरह-वेदनाक अनुभव कय विक्षिप्त मन सनक भेल घुमैत छथि । तेँ सुलभ अहाँक काज अछि। से मल्लिकावन जाय अहाँ रहु । हमहु श्रीकृष्णकेँ ओतय आनब ।

[सभ बहार भेल।]

।। चारिम अङ्क समाप्त भेल ।।

अथ पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति चिन्ताकुलः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(स्वगतं) कथमिदानीमपि नागता विशाखा ? किमत्र विलम्बकारणम् ? किमु कोपवशेन यत्र कुत्रापि प्रस्थिता प्रियतमा न मिलिता ? किं वा बहुतरयत्नेनाप्यनुनयं नाङ्गीकरोति ? अथवा परचित्तानुतापानभिज्ञा विशाखा तदनुनययत्ने शिथिलादरैवास्ते ? किमत्र विधेयम् ? (पुनः सर्वतः परिक्रम्य दृष्ट्वा सहर्षं) इयमागतैव ।

(ततः प्रविशति हर्षोत्फुल्लमानसा विशाखा)

विशाखा—कुसलं भवदो ? [कुशलं भवतः ?]

श्रीकृष्णः—विशेषतस्तवागमनेन । कथय किं साधितमभीप्सितम् ?

पाँचम अङ्क

[चिन्ता सँ व्याकुल श्रीकृष्ण प्रवेश करैत छथि ।]

श्रीकृष्ण—(स्वगत) एखन धरि विशाखा कियेक नहि आयलि छथि ? एहिठाम विलम्बक की कारण ! की तमसायकेँ जतय कतहु गेलि प्रियतमा नहि भेटलथिन्ह ? अथवा की बहुत यत्नहुँ सँ प्रार्थना केँ नहि स्वीकार करैत छथिन ? अथवा आनक मनक सन्ताप सँ अपरिचित विशाखा हुनक अनुनय करबा मे मन्द पड़ि गेलि अछि ? एहना मे की करी ? (फेर सभ दिस टहलि देखि सहर्ष) इयेह आबिये गेलीहि ।

[तखन अनन्द सँ उल्लास भ ल मनवाली विशाखा प्रवेश करैत छथि ।]

विशाखा—अपने कुशल छी ?

श्रीकृष्ण—विशेष रूपेँ अहाँक आगमन सँ । कहू की इष्ट साधन कयल ?

विशाखा—अघ इं ? [अथ किम् ?]

श्रीकृष्णः—विशेषेण कथय ।

विशाखा—भवदोवि अहिअदरं उव्विग्गहिअआ मुज्झकिदे अह्माणं पिअसही राहिआ मल्लिआवणे चिट्ठइ । ता भत्ति आस्सासणीआ सा ।

[भवतोऽप्यधिकतरम् उद्विग्नहृदया त्वत्कृतेऽस्माकं प्रियसखी राधिका मल्लिकावने तिष्ठति । तज्झटित्याश्वासनीया सा ।]

अपि च,

[गीत सं०--२१]

माधव ओ रे, कि कहब तसु अपरुब गति, गुनमति
　　तुअ बिनु लागु बिगतमति ॥
हिमकर ओ रे, निरखि कापि कह अम्बर, अन्तर,
　　देख उगल निशि दिनकर ॥
कहइछ ओ रे, परस पावि तनु करपूर, कह दूर
　　कओन देल तनु बिषचूर ॥

विशाखा—त आओर की ?

श्रीकृष्ण—विशेषरूपेँ कहू ।

विशाखा—अहूँ सौं अधिक विकल हृदयवाली अहाँक लेल हमर प्रियसखी राधिका मल्लिकावन मे छथि । तेँ झटदय हुनका आश्वासन दिअन्हु । आओर—

[गीत सं०—२१]

अपरुब गति = अपूर्व हालत । बिगतमति = बताहि ॥ हिमकर = चन्द्रमाकेँ । निरखि = देखि । अम्बर = आकाश मे । अन्तर = मध्य मे । निशि दिनकर = राति मे सूर्य ॥ परस = स्पर्श । तनु = देहमे । करपूर = कर्पूरक । बिषचूर = विषक चूर्ण ॥ मारुत = बसातकेँ । भुजगश्वास = साँ-

मारुत ओ रे, भुजगश्वास निरनय कर, कह घर,
　　देखु कतहु अछि विषधर ॥
कुसुमित ओ रे, उपवन निरखि चेअ कि रह, धनि कह,
　　देखु लागु दव हुतवह ॥
रस बुझ ओ रे, रस भावक जन मन दय, गुणमय,
　　हर्षनाथ भन रसमय ॥

अपि च,　　[गीत सं०—२२]

सुनिअ वचन गिरिधारी, सुकुमारी, तुअबिनु जीवन हारी ॥
पवन परस नहि रोचे, धृति मोचे कालियगञ्जन शोचे ॥
चान-किरण तहु कापे, तनुतापे, मन्दरगिरि कर शापे ॥
मदन-वेदन तनु भारी, ब्रजनारी, कर सुमिरन त्रिपुरारी ॥
अनुखन कर तुअ ध्याने, अनुमाने तेँ नहि तेजय पराने ॥
अचिर चलिअ यदुराजे, तस काजे, करिअ यतन दय आजे ॥
हर्षनाथ कवि गावे, मन लावे गुनिजन जानथि भावे ॥

पक श्वास छुबैत अछि । कुसुमित = फुलायल । उपवन निरखि = फुलवाड़ीकेँ देखि । चेअ कि = चौंकैत । दव-हुतवह = दावानल, जंगली आगि ॥

आओरो,

[गीत सं०—२२]

गिरिधारी = कृष्ण । पवन-परस = हवाक स्पर्श । रोचे = सोहाइत छक । धृति मोचे = धैर्य छोड़ैत अछि । कालिय-गञ्जन शोचे = कालिय-नागक दुर्गतिक शोच करैत छथि जे ओ रहितथि तँ एहि दुखदायी बसातकेँ पीबि जैतथि । तहु = तँ । तनु तापे = देह तप्त । मन्दर-गिरि कर शापे = मन्दराचल पर्वतकेँ शाप दैत छथि जे ओ किएक नहि एहि दुखदायी चन्द्रमाकेँ अड़कय दैत छथि । मदन-वेदन = काम-व्यथासँ । सुमिरन त्रिपुरारी = महादेवक स्मरण करैत छथि जे कामकेँ जरओने छलाह ॥ तेँ = अहाँक ध्यान करबाक कारणेँ ॥ अचिर = शीघ्र । यतन = प्रयास ॥

श्रीकृष्णः—(आत्मगतम्) अहो विधेरनुकूलता, यत्कृतापराधोऽप्यहमेवाभ्यर्थनीयः संवृत्तः। अहो सरलस्वभावता प्रेयस्याः! (प्रकाशम्) सखि विशाखे! झटिति प्रियाश्वासनाय मल्लिकावनं गन्तव्यम्।

(इत्युभौ परिक्रमं नाटयतः)।

श्रीकृष्णः—(विलोक्य सबहुमानम्) अहो मल्लिकावनशोभा! तथाहि—

[गीत सं०--२३]

सकल - भुवन - जनमोहन कामा।
उपगत ललित लता - नवरामा॥
कुसुमवदन तसु हास विकासा।
बाहु विटप, पल्लव कर भासा॥
गुच्छ पयोधर मधु मरन्दा।
रसिक मधुपजन आनन्दकन्दा॥
कलकिङ्किणि कल नूपुर रावे।
मधुपावलि मणिमाल सोहावे॥
तनु उद्वर्त्तन पुष्पपरागा।
सिर सिन्दुर उपगत नवरागा॥

श्रीकृष्ण—(स्वगत) अहा विधाताक अनुकूल भेनाई, जे अपराध कयलहु पर हमहीं प्रार्थनीय भेलहुँ। हाय प्रियाक कोमल स्वभाव! (प्रकाश) सखी विशाखा! झटदय प्रियाक आश्वासनक हेतु मल्लिकावन जाएब।

(दुहू जयबाक अभिनय करैत छथि)

श्रीकृष्ण—(देखि बहुत आदरक संग) अहो मल्लिकावनक शोभा! जेना कि—

[गीत सं०—२३]

उपगत = उपस्थित। ललित-लता-नवरामा = सुन्दर लत्तीकेँ नवीन सुन्दरी (नायिका)। कुसुम-वदन = फूल सँ युक्त ओहि लताक मुँह। बाहु विटप = ओकर बाँहि गाछ थिक। पल्लव कर भासा = पल्लव हाथरूप मे शोभित। गुच्छ पयोधर = फूलक गुच्छा स्तन थिकैक। मधु मरन्दा = फूलक रस मदिरा थिकैक। रसिक मधुपजन = भौंरा रसिक प्रेमी थिक। आनन्द-कन्दा = अतिशय आनन्ददायी॥ कल-

कुसुम - सुगन्धि - सुवासित देहा।
मारुतचुम्बित नवल सिनेहा॥
किसलय कन्दल पुलकित वेशा।
कोकिलकूजित भणित विशेषा॥
हर्षनाथ कविशिखर भाने।
एकरदेश्वरसिंह रस जाने॥

अवश्यमत्रैव मत्प्रेयसी भविष्यति। तद्यावदत्र प्रविशामि। (इति प्रवेशमभिनयति।)

(ततः प्रविशति शिशिरोपचारव्यग्रहस्तया सख्या समुपविष्टा राधा)

राधा—(संस्कृतमाश्रित्य)

ईर्ष्यातिरेकेण मयाऽनमत्या
तिरस्कृतश्चाटु वदन्नतोऽपि।
भाग्यं तथा मे भविता यथाऽसौ
पुनः प्रसादाभिमुखो हरिः स्यात्॥७॥

किङ्किणी-कल = डगरा पहीक हलीक चनचनाएब। रावे = शब्द करैछ। मधुपावलि = भौंराक समूह। तनु उद्वर्तन = देह मे लगयबाक उबटन। नव रागा = नवीन अनुराग॥ सुवासित = सुगन्धित। मारुत = हवा सँ। किसलय कन्दल = नव पल्लवक अंकुर सँ। पुलकित = आनन्दित। कोकिल कूजित = कोइलीक कुहुकब। भणित-विशेषा = बजबाक विशेषता॥

रहओ एहीठाम हमर प्रेयसी होइतीहि। तँ कनेक एहिठाम प्रवेश करैत छी। (प्रवेशक अभिनय करैत छथि।)

[तखन ठंढाक उपचारक हेतु व्याकुल हाथवाली सखीक संग राधा प्रवेश करैत छथि।]

राधा—(संस्कृत भाषा मे) अज्ञानी हम अतिशय ईर्ष्या सँ, नम्र एवं खुशामद करैत प्रियकेँ अपमानित कयल। हमर भाग्य तँ तखने ठीक होयत जखन श्रीकृष्ण पुनः प्रसन्न भय जयताह॥७॥

श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा सहर्षं स्वगतम्) एषा मत्प्रेयसी किमपि मन्त्रयति । तल्लतान्तरितो भूत्वा रहस्यसम्भाषणमस्याः शृणोमि । (इति तथा करोति) ।

राधा—(पुनरपि 'ईर्ष्यातिरेकेण' इत्यादि पठति ।)

श्रीकृष्णः—(श्रुत्वा आत्मगतं) मन्निमित्त एवैषोऽभिलापः । तदुपसर्पामि । (इत्युपसृत्य प्रकाशं) किमेतत्प्रलपसि ? ननु ममैव तथा भाग्यं भवितेति वक्तव्यम् (इति राधिकां करे गृह्णाति) ।

राधा—(ससंभ्रमं स्वगतं) कधं सुदं रहस्समन्तणं अज्जउत्तेण ? अहो पमादो ! [कथं श्रुतं रहस्यमन्त्रणं आर्यपुत्रेण ? अहो प्रमादः !] (इति सलज्जमधोमुखी तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—(राधाया मुखमुन्नमय्य)

त्वद्वियोगानलज्वालाप्रतप्तं निजकिङ्करम् ।
अयि चन्द्रानने कान्ते ! सिञ्च वागमृतेन माम् ॥८॥

श्रीकृष्ण—(देखि सहर्ष स्वगत) इयेह हमर प्रेयसी किछु विचारैत छथि । तँ तावत् लत्तीक अढ़ भय गुप्तभाषण हिनक सुनैत छी । (ताहिना करैत छथि ।)

राधा—(फेर 'ईर्ष्यातिरेकेण' इत्यादि श्लोक सं०—७ पढ़ैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(सुनि स्वगत) हमरहि दुआरेँ ई प्रलाप होइत अछि त लग जाइत छी । (लग जाय, प्रकाश) ई की प्रलाप करैत छी ? ई तँ हमरे ओहन भाग्य होअओ से कहू । (राधा क हाथ पकड़ैत छथि ।)

राधा—(हरबड़ाय स्वगत) की सुनि गेलाह गुप्त-बातकेँ आर्यपुत्र ? हाय रे असावधानी ! (लाजेँ नीचाँमुहेँ रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(राधाक मुँह उठाय) अहाँक वियोगरूपी आगिक ज्वाला सँ सन्तप्त एहि अपन-सेवकस्वरूप हमरा हे चन्द्रमुखी प्रिये ! अपन वचनरूपी अमृत सँ सींच ॥८॥

राधा—(स्वगतं) कधं पुव्वं तहा अणादरं कदुअ दाणि धरिट्ठवअणं भणिदव्वं । [कथं पूर्वं तथा अनादरं कृत्वा इदानीं धैर्यवचनं भणितव्यम्] (इति तथैव तिष्ठति) ।

श्रीकृष्णः—

अलं विषादेन सरोरुहाक्षि !
कृतागसि प्रेयसि युक्त एव ।
कोपः कृतोऽसौ विरतिं प्रयातु
प्रसीद मैवं भवितापराधः ॥९॥

राधा—मए ज्जेव कओ अवराहो या कधानुणओवि तुमं ण अवलोइदो । ता मरिसदु अज्जउत्तो [मयैव कृतोऽपराधः यत्कृतानुनयोऽपि त्वन्नावलोकितः । तन्मर्षयत्वार्यपुत्रः] (इत्यञ्जलिं बध्नाति) ।

श्रीकृष्णः—(राधामङ्कमारोप्य) प्रिये !

[गीत सं०—२४]

तुअ विशलेष पराभव सजनी, जे किछु उपगत भेल ।
यतनहु कहि न शकिअ तत सजनी, से सभ अब दुर गेल ॥

राधा—(स्वगत) पहिने ओहन अनादर कय एखन कोना धैर्यक वचन बाजू ? (ओहिना ठाढ़ि रहैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—हे कमल-नयने ! पश्चात्ताप जनु करी । अपराधी प्रियजन पर अहाँक द्वारा कयल कोप उचिते अछि । मुदा से आब समाप्त होअओ । प्रसन्न होउ, आब एहन अपराध नहि होयत ॥९॥

राधा—हमहीँ अपराध कयने छी जे यत्नपूर्वक प्रार्थना कयलोपर अहाँकेँ नहि देखलहुँ । तेँ क्षमा करू आर्यपुत्र । (कर जोड़ैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—(राधाकेँ कोर पर बैसाय) प्रिये !

[गीत सं०—२४]

तुअ विशलेष पराभव = अहाँक वियोग सँ प्राप्त दुःख । उपगत = उपस्थित । यतनहुँ = प्रयासो कयला पर । विधिवश = भाग्य सँ ।

विधिवश आज देखल हम सजनी पुन परसन मुख तोर ।
लोचनयुगल जुड़ाएल सजनी तुअ मुखचान चकोर ॥
तइओ प्रेम नहि विचलय सजनी, पओं होअ अन्तर दूर ।
गगन जलद लखि हरषय सजनी, कानन बसत मयूर ॥
जइओ पिशुन प्रतिरोधक सजनी, छुटय न प्रेमक लागि ।
धरिअ सलिल शतवत्सर सजनी, रविमणि तेजय न आगि ॥
धरिअ हृदय मम शीतल सजनी, लोचन कमल निहारि ।
सींचिअ वचन सुधारस सजनी, निज अनुचर अवधारि ॥
हरिपद पङ्कज मधुकर सजनी, हर्षनाथ कवि गाव ।
एकरदेश्वरसिंह बुझ सजनी, रसमय मन दय भाव ॥

राधा—(सहर्षं) पुणोवि वणविहाराय उक्कण्ठदि मे हिअअं । जइ भअवदो अनुग्गहेण वसन्द ऋदू णिअवेहवं पकडइस्सदि । [पुनरपि भगवतो अनुग्रहेण वसन्त-वनविहारायोत्कण्ठते मम हृदयम् । यदि भगवतोऽनुग्रहेण वसन्त-ऋतुर्निजवैभवम् प्रकटयिष्यति ।]

पुन = फेर । परसन = प्रसन्न । लोचन-युगल = दुनू आँखि । तुअ मुख चान चकोर = अहाँक मुखरूपी चन्द्रमाक लेल चकोर पक्षी स्वरूप (आँखि) ॥ विचलय = विचलित होअय । गगन जलद लखि = आकाश मे मेघ देखि । कानन = वनमे । पिशुन = चुगिला । प्रतिरोधक = बाधा कयनिहार । सलिल = पानि मे । शतवत्सर = सैकड़ो वर्ष तक । रवि-मणि = सूर्यकान्त मणि । मम = हमर । लोचन-कमल = कमल सनक आँखि सँ । वचन सुधारस = वचन रूपी अमृतक रस सँ । निज अनु-चर अवधारि = अपन सेवक बूझि । हरिपदपङ्कज मधुकर = कृष्णक चरणकमलक भ्रमर ॥

राधा—(सहर्ष) फेरो वन-विहारक लेल हमर हृदय उत्कण्ठित होइछ, जौं भगवानक कृपा सँ वसन्त ऋतु अपन वैभव (सम्पत्ति) कें प्रकट करितथि ।

श्रीकृष्णः—एवमस्तु (इति वसन्तं स्मरति) ।

(ततः स्मृतमात्रो वसन्तो भगवन्तं बहुमानयन् काननमवगाहमानो निज-वैभवं प्रकटीचकार ।) यथा—

[गीत सं०—२४]

नव कुन्द किंशुक रुचिर चम्पक मल्लिकावलि मालती ।
लस मधुक नीप नेवारि विकसित ललित माधविका लती ॥
अतिलसत चारु लवङ्गलतिका कर्णिकार सोहावही ।
नव बकुल चकहुल नागकेसर सरस जन मन भावही ॥
पुन कोकिलाकुल मधुप काकलि कलित कानन सोहही ।
जनि कुसमसौरभ भार मन्थर अनिल मानस मोहही ॥
नव मलयवात समिद्ध मनसिज दहन युवजन होमही ।
निज लाज मान विवेक धैरज करि पुरोधस सोमही ॥

श्रीकृष्ण—एहने होअओ । (वसन्तक स्मरण करैत छथि ।)

[तखन स्मरणमात्र कयला पर वसन्त भगवानकेँ बहुत आदर करैत वन मे पहुँचैत अपन वैभव (ऐश्वर्य) कें प्रकट कय देल । जेना—]

[गीत सं०—२४]

किंशुक = पलाश । रुचिर चम्पक = सुन्दर चम्पाफूल । मल्लिकावलि = बेलीक पाँती । लस = शोभित होइछ । मधुक = महु । नीप = कदम्ब । नेवारि = कुन्दजातिक फूल ॥ चारु = सुन्दर । कर्णिकार = कनैल । मधुप-काकलि = भौंराक मधुर गान । कलित कानन = शोभित वन । कुसुम-सौरभ-भार-मन्थर-अनिल = फूलक सुगन्धिक भार सँ मन्द-मन्द चलैत बसात ॥ मलय-वात-समिद्धि = मलयाचलक बसात सँ पजरल । मनसिज-दहन = कामदेव रूपी आगि । युवजन होमही = युवक सभ कें हवन करैत छथि (झोंकैत छथि) । पुरोधस सोमही = पुरहितो चन्द्रमा करैत छथि ॥ ऋतुराज वैभव = वसन्तक

ऋतुराजवैभव परमसौभग प्रकट जग जन जानही ।
वृषभानुनन्दिनि निरखि कानन सफल लोचन मानही ।।
पुन करति कन्दुक केलि हर्षित कृष्णनेह बढ़ावही ।
कवि हर्षनाथ सनाथ जीवन युगलपद मन भावही ।।

श्रीकृष्णः—किन्ते भूयः प्रियमुपकरोमि ?

राधा—आदोवि वरं पिअं होइ ? तहावि इदं होदु। [अतोऽपि परं प्रियम्भवति ? तथाऽपि इदम् भवतु ।] (संस्कृतमाश्रित्य)—

धाराधरो वर्षतु वारि काले
वर्णास्स्वधर्माभिरता भवन्तु ।
धर्माभिगुप्ता पृथिवी नरेन्द्रैः
भूयात् सशस्या, रसिका रमन्ताम् ।।१०।।

[गीत सं० — २६]

निजनिज धरम रमओ सभ लोका
कबहु न पावओ सज्जन शोका ।।
बरिसओ समय सलिल जलवाहा ।
करओ सकल जन प्रेमनिवाहा ।।

सम्पदा। सौभग = सौन्दर्य। वृषभानु-नन्दिनि = राधा। कानन = वनकें।। कन्दुककेलि = गेनक खेल ।।

श्रीकृष्ण—आब अहाँक आओर प्रिय उपकार की करू ?

राधा—एहू सँ अधिक प्रिय होइत छैक ? तथापि ई होअओ। (संस्कृत मे)—
मेघ उचित समय पर जल बरिसओ, सभ जातिक लोक अपन अपन धर्म पर तत्पर रहओ, पृथ्वी राजासभ सँ धर्मपूर्वक पालित भय धान्य सँ पूर्ण होअओ ओ रसिक जन आनन्दित रहथु ।।१०।।

[गीत सं०—२६]
निज = अपन। रमओ = प्रीति करओ। सलिल = जल। जलवाहा =

कविजन काव्य रचओ सानन्दा ।
करओ रसिकजन वचनविनोदा ।।
खलजन राजसदन नहि आवे ।
अनुछन गुणिजन सत्कृत पावे ।।
धरणी शस्यभरलि सभकाला ।
पालथु धरम धरणि क्षितिपाला ।।
हर्षनाथ कवि मन दय गावे ।
एकरदेश्वरसिंह बुझ भावे ।।

श्रीकृष्णः - एवमस्तु ।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे) ।।

।। इति पञ्चमोऽङ्कः ।।

इति श्रीहर्षनाथशर्मविरचितं माधवानन्दनाम नाटकम् ।।

मेघ। प्रेम-निवाहा = प्रेमक निर्वाह। वचन-विनोदा = वचन सँ आनन्दित। खलजन = दुष्टव्यक्ति। राजसदन = राजाक घर मे। सत्कृत = सत्कार। धरणी = पृथ्वी। शस्य = धान्य। धरम = धर्म सँ। धरणि = पृथ्वीकें। क्षितिपाला = राजा।।

श्रीकृष्ण—एहने होअओ ।

[सभ बहार भेल ।]

।। पाँचम अङ्क समाप्त ।।

इति श्रीहर्षनाथ (झा) शर्माक बनाओल माधवानन्द नामक नाटक पं० श्रीशशिनाथझा विद्यावाचस्पतिकृत 'प्रबोधिनी' मैथिलीव्याख्या समाप्त भेल ।।

